The International Journal of Advanced Research In Multidisciplinary Sciences
(IJARMS)
Volume 3 Issue 2, Nov. 2020

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन की प्रासंगिकता

डॉ० विजय कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर, बी एड विभाग,
हीरालाल रामनिवास स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खलीलाबाद, संतकबीरनगर।

आज हमारे देश भारत सहित समस्त विश्व में बढ़ती अराजकता, हिंसा, मनो–उन्माद, आतंकवाद, नशाखोरी तथा पर्यावरण क्षरण आदि समस्याओं के कारण समस्त मानव जाति को अपनी सभ्यता और संस्कृति के समक्ष अस्तित्व का संकट दिखाई दे रहा है। वास्तव में आँखें बंद रखे हुए मानव ने अपने सांस्कृतिक मूल्यों की अवहेलना करते हुए पश्चिमीकरण के रास्ते जो विकास की यात्रा तय की है, उसके कारण आज हमें अपनी सभ्यता और संस्कृति के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता प्रतीत हो रही है। विकास की इस यात्रा में मनुष्य प्रजाति ने शिक्षा प्रणाली के मानवीय आधारभूत मूल्यों की अनदेखी की। वास्तव में शिक्षा मनुष्य को मानव बनाने की प्रक्रिया है या यह कहा जाये कि मनुष्य को मानव बनाने का दायित्व शिक्षा पर है। शिक्षा की व्यवस्थागत प्रक्रिया से निकलकर ही बालक एक वयस्क के रूप में समाज में अपना स्थान और स्तर निर्धारित करता है। व्यक्तित्व और समाज की आवश्यकता के अनुसार बालक को शिक्षित और सभ्य बनाने का अहम कार्य शिक्षा व्यवस्था से ही अपेक्षित होता है।

सार्वभौमिक शिक्षा प्रदान करने के समर्थक स्वामी विवेकान्द शिक्षा में किसी भी प्रकार के भेदभाव के विरुद्ध थे। वे इस सत्य को भली–भांति जानते थे कि यदि शिक्षा ग्रहण करने का अवसर अगर कुछ लोगों तक ही सीमित हो या किसी भी कारण से समाज का बड़ा हिस्सा शिक्षा की प्राप्ति से वंचित रह गया तो देश का सम्पूर्ण विकास नहीं हो पायेगा। उनके विचार में शिक्षा का प्रसार देश के कारखानों, खेल के मैदानों और खेतों, यहाँ तक कि देश में हर घर में होना चाहिए। यदि बच्चे स्कूल तक नहीं आ पा रहे हैं तो शिक्षकों को उन तक पहुँचना चाहिए। विवेकानंद जी के अनुसार शिक्षा समाज के निर्धनतम व्यक्ति को भी प्राप्त होनी चाहिए। स्वामी विवेकानंद ने आम जनता के जीवन की परिस्थितियाँ सुधारने के लिए जन शिक्षा का समर्थन किया। और उन्हों ने कहा ''मैं जन साधारण की अवहेलना करना महान राष्ट्रीय पाप समझता हूँ। यह हमारे पतन का मुख्य कारण है। जब तक भारत की सामान्य जनता को एक बार फिर उपयुक्त शिक्षा, अच्छा भोजन तथा अच्छी सुरक्षा नही प्रदान की जाएगी तब तक प्रत्येक राजनीति बेकार सिद्ध होगी।''[1]

स्वामी विवेकानंद ने महिला शिक्षा पर विशेष बल दिया। समाज में कई अवसरों पर स्वामी विवेकानंद ने विचार प्रकट करते हुए कहा कि जब तक महिलाओं को अपने देश में यथोचित सम्मान प्राप्त नहीं हो जाता भारत प्रगति नहीं कर सकता। उनके अनुसार महिलाओं को सुशील, चरित्रवान, निडर और शक्तिशाली व्यक्तित्व के रूप में विकसित करना शिक्षा का उद्देश्य है। उनके विचार में महिला न केवल पुरुष के समान योग्य है बल्कि वह घर–परिवार में भी बराबर की भागीदारी रखती है उसे किसी दृष्टि से पुरुष से हीन नहीं कहा जा सकता। उन्होंने महिला शिक्षा और महिला–पुरुष समानता पर भी बल

दिया। उनका मानना था कि देश के उत्थान हेतु स्त्री–शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया जाना चाहिए और उन्हें नें कहा ''पहले अपने सत्रियो को शिक्षित करो, तब वे आप को बतायेंगी कि उनके लिए कौन से सुधार आवश्यक है? उनके मामलों में बोलने वाले तुम कौन हो''।[2]

स्वामी विवेकानंद ने मातृभाषा के माध्यम से शिक्षा दी जाने वाली प्रणाली के महत्व को स्वीकार किया। भौतिकता और पश्चिमी अंधानुकरण के कारण मातृभाषा की अवहेलना कर अंग्रेजी को बालमन पर थोपा जाता है। मातृभाषा का घर–परिवार और समाज में अधिकतम प्रयोग किया जाता है ऐसे में स्वाभाविक है कि किसी विदेशी भाषा को रटने की बजाय मातृभाषा के माध्यम से ही बालक दीर्घकालीन और अधिकतम ज्ञान प्राप्त कर सकता है। बालक मातृभाषा के माध्यम से ही रचनात्मक और कलात्मक विचारों का प्रसार समाज में कर सकता है।

रचनात्मकता विरोधी, संस्कार विरोधी तथा अव्यवहारिक मैकालेवादी शिक्षा व्यवस्था से स्वामी विवेकानंद बेहद असंतुष्ट थे क्योंकि उनकी दृष्टि में यह शिक्षा भारत के नागरिकों के लिए व्यावहारिक और उपयोगी नहीं थी। अंग्रेजी शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य भारत अथवा भारतीयों का हित करना नहीं बल्कि भारत पर अंग्रेजों के शासन को स्थायी रखने के लिए भारतीयों में से ही क्लर्क खोजना था। उनके विचार में मैकालेवादी शिक्षा व्यवस्था व्यक्ति को आत्म–निर्भर न बनाकर दूसरे पर निर्भर बनाती है और उसके आत्मविश्वास को समाप्त कर देती है। इससे भी बढ़कर अंग्रेजी शिक्षा का मूल्य–विरोधी स्वरूप, व्यक्ति के धार्मिक और आध्यात्मिक विश्वासों को समाप्त कर उसे एक नकारात्मक व्यक्तित्व के रूप में परिणत कर देता है। इसलिए विवेकानंद जी अंग्रेजी शिक्षा प्रणाली में भारतीय दृष्टिकोण और सामाजिक आदर्शों के अनुसार आमूल–चूल परिवर्तन के इच्छुक थे।

नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों से विहीन शिक्षा प्रणाली किसी भी समाज को अवनति की ओर ले जा सकती है। स्वामी विवेकानंद ने इसलिए अनिवार्य रूप से शिक्षा में गीता, उपनिषद और वेद में निहित नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के समावेश की आवश्यकता पर बल दिया। उनके लिए धर्म, कर्मकांड अथवा धार्मिक रीति –रिवाज नहीं बल्कि समस्त मानव जाति के लिए आत्मज्ञान तथा आत्मबोध का कारक है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार वास्तविक धर्म किसी समाज, जाति, नस्ल, वंश, स्थान और समय तक सीमित नहीं है बल्कि उसका लक्ष्य सामाजिक कल्याण है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार नैतिकता और धर्म एक ही हैं और इन मूल्यों से ओतप्रोत शिक्षा विद्यार्थियों का सर्वांगींण विकास करने में सहायक है।

मन और शरीर दोनों को विकसित करने के लिए स्वस्थ रहना आवश्यक है। स्वामी विवेकानंद का विचार था कि बिना स्वस्थ शरीर के आत्म बोध या चरित्र निर्माण संभव नहीं है। इसलिए स्वामी विवेकानंद ने पाठ्यक्रम में शारीरिक शिक्षा को विशेष रूप से शामिल करने पर बल दिया। उन्होंने युवा वर्ग से आह्वान किया कि वे गीता पाठ करने की अपेक्षा फुटबॉल खेलने से स्वर्ग के अधिक नजदीक पहुंचेंगे। उन्होंने कहा कि बलवान शरीर और मजबूत पुट्ठों से युवा वर्ग गीता को भी बेहतर ढंग से समझ सकेगा। मनुष्य का वास्तविक और सर्वांगीण विकास तभी माना जाएगा जब वह मन और तन दोनों से न केवल स्वस्थ हो, बल्कि समाज में सकारात्मक योगदान भी करे।

स्वामी विवेकानंद के शिक्षा सम्बन्धी विचारों में प्राचीन भारतीय मूल्यों, आदर्शों और आधुनिक पश्चिमी मान्यताओं का समावेश है। स्वामी विवेकानंद के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य व्यक्ति और व्यक्तित्व निर्माण है। व्यापक दृष्टिकोण अपनाते हुए स्वामी विवेकानंद ने शारीरिक, मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक और व्यावसायिक विकास के साथ भेदभाव रहित शिक्षा तक सार्वभौमिक पहुँच का समर्थन किया। उन्होंने

व्यावहारिक और आधुनिक दृष्टिकोण अपनाते हुए उन्होंने प्रौद्योगिकी, वाणिज्य, उद्योग और विज्ञान से जुड़ी पश्चिमी शिक्षा को भी महत्व दिया। उन्हों ने कहा ''उठो! जागो और उस समय तक बढ़ते रहो जब तक कि चरम उद्देश्य की प्राप्ति न हो जाए।[3]

इस प्रकार स्वामी विवेकानंद के शैक्षणिक दर्शन में आध्यात्मिक और भौतिक विकास पर बल देते हुए मानव के व्यक्तित्व निर्माण को प्राथमिकता दी गई है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन अत्यंत प्रासंगिक है जिसका अनुसरण कर वर्तमान समाज की समस्याओं का समाधान किया जा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द के शिक्षा दर्शन के आधारभूत सिद्धान्त निम्नलिखित हैं –

- → स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विकास हो सके।
- → स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार शिक्षा ऐसी हो जिससे बालक के चरित्र का निर्माण हो, मन का विकास हो, बुद्धि विकसित हो था बालक आत्मनिर्भन बने।
- → स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि बालक एवं बालिकाओं दोनों को समान शिक्षा देनी चाहिए।
- → स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार धार्मिक शिक्षा, पुस्तकों द्वारा न देकर आचरण एवं संस्कारों द्वारा देनी चाहिए।
- → पाठ्यक्रम में लौकिक एवं पारलौकिक दोनों प्रकार के विषयों को स्थान देना चाहिए।
- → स्वामी विवेकानन्द जी का मानना है कि शिक्षा, गुरू गृह में प्राप्त की जा सकती है।
- → शिक्षक एवं छात्र का सम्बन्ध अधिक से अधिक निकट का होना चाहिए।
- → सर्वसाधारण में शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार किया जान चाहिये।
- → देश की आर्थिक प्रगति के लिए तकनीकी शिक्षा की व्यवस्था की जाय।
- → मानवीय एवं राष्ट्रीय शिक्षा परिवार से ही शुरू करनी चाहिए।

स्वामी विवेकानन्द जी के तन–मन में भारतीयता एवं आध्यात्मिक कूट–कूट कर भरी हुई थी। अतः उनके शिक्षा दर्शन का आधार भी भारतीय वेदान्त तथा उपनिषद ही रहे। वे कहते थे कि प्रत्येक प्राणी में आत्मा विराजमान है। इस आत्मा को पहचानना ही धर्म है। स्वामीजी का कि अटल विश्वास था सभी प्रकार का सामान्य तथा आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य के मन में है। अभी तक इसकी खोज नहीं हो पायी है। यह ढका ही रह गया है। परन्तु जब इस पर पड़ा हुआ आवरण उतार दिया जाता है तो हम हम कहने लगते हैं कि हम सीख रहे हैं। स्वामी विवेकानन्द जी एक महान दार्शनिक थे और दार्शनिक होने के नाते उन्होंने अपने दर्शन के अनुकल, शैक्षिक विचार प्रस्तुत किये हैं इन्हीं शैक्षिक विचारों के कारण इनकी गणना महान शिक्षाशास्त्रियों में की जाती है। इन्होंने अपने काल की शिक्षा का विरोध किया और उसे निषेधात्मक एवं भावात्मक बताया। स्वामी जी ने कहा ''आप उस व्यक्ति को शिक्षित मानते हैं जिसमे कुछ परीक्षायें पास कर ली हो तथा जो अच्छे भाषण दे सकता हो। पर वास्तविकता यह है कि जो शिक्षा जनसाधारण को जीवन संघर्ष के लिए तैयार न कर सके, जो चरित्र निर्माण न कर सके, जो समाज सेवा की भावना का विकास न कर सके तथा जो शेर जैसा साहस पैदा नही कर सकती ऐसी शिक्षा व्यर्थ है''।[4] उनका कहना था कि हमें ऐसी शिक्षा की आवश्यकता है जिसमें चरित्र गठन हो, मानसिक वीर्य बढ़े, बुद्धि का विकास हो और व्यक्ति अपने पैरों पर खड़ा हो और जो भावों एवं विचारों को आत्मसात कराये। स्वामीजी के वेदान्त दर्शन में सभी प्रकार के धार्मिक विचार निहित

हैं। उनका वेदान्त दर्शन ईश्वरकृत है। इसी कारण इस पर किसी वैयक्तिता की तनिक भी छाप नहीं मिलती। जो ज्ञान यथार्थ या वास्तविकता की ओर ले जाता है, वही वेदान्त है। वेदान्त का अभिप्राय जीवन और जगत के सम्बन्ध में इस अन्तिम सत्य और ज्ञान की प्राप्ति है जिसे व्यक्ति जन्म से मृत्यु तक प्राप्त करता है तथा जिससे जीवन के दुःख दूर होते हैं, जन्म–मृत्यु के बन्धन कटते हैं अर्थात् मोक्ष मिलता है। स्वामी विवेकानन्द जी ने ईश्वर, आत्मा, जगत, मानव, माया, पुनर्जन्म, सत्य, ज्ञान, धर्म, आध्यात्मिकता आदि पर अपने विचार बड़े ही वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किये हैं।

स्वामी जी शिक्षा द्वारा व्यक्ति के भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों विकास पर समान बल देते थे। इसलिए इसी के अनुरूप पाठ्यक्रम के दो प्रकार बताये लौकिक तथा आध्यात्मिक द्य लौकिक पाठ्यक्रम के अन्तर्गत, कला, संगीत, इतिहास, भूगोल, खेल, राजनीति, अर्थशास्त्र, गणित और विज्ञान, धर्म–दर्शन एवं तकनीकी शिक्षा तथा आध्यात्मिक विषयों के अन्तर्गत, धर्म एवं दर्शन (वेद, वेदान्त और उपनिषद), गीता, पुराण, भागवत, नीतिशास्त्र, कीर्तन, भजन, सत्संग एवं ध्यान। इन पाठ्यक्रमों को यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखते हैं तो ऐसा लगता है स्वामी जी की शिक्षा आज हमारे लिए आदर्श एवं मार्गदर्शन का कार्य कर रही है। माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक विषयों का समावेश, वैज्ञानिक विषयों की अधिकता तथा नैतिक शिक्षा आज हमारे शैक्षिक पाठ्यक्रम के अभिन्न अंग हैं जो कि स्वामी जी द्वारा अनुप्राणित हैं। पाठयक्रम में सत्य का समावेश होना चाहिए। उपनिषद के सत्य महान है। जो सत्य महान होता है वह सहज भी होता है। स्वामी जी ने कहा ''उपनिषदों शक्ति की विशाल खान है। उनमें ऐसी प्रचुर शक्ति विद्यमान है कि वे संसार को तेजस्वी बना सकते है।''[5]

यद्यपि कि शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर निर्धारित आज का पाठ्यक्रम स्वामी जी के विचारों की आंशिक पूर्ति करता हैं जैसे विज्ञान एवं व्यावसायिक विषयों की अधिकता किन्तु आध्यात्मिक पक्ष की पूर्णतया अनेदेखी कर रहा हैं विविध प्रकार के ज्ञानार्जन हेतु स्वामीजी ने आधुनिक मनोवैज्ञानिक शिक्षण विधियों के प्रयोग का सुझाव दिया। एकाग्रता को प्रमुख शिक्षण विधि के रूप में बताते हुए उन्होंने प्रायोगिक, स्वाध्याय, मनन एव चिन्तन व्याख्यान, वाद–विवाद, प्रश्नोत्तर, पर्यटन, कहानी, तुलनात्मक, वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, चर्चा, मौन, आदि शिक्षण विधयों को उपयोगी बताया। स्वामी जी द्वारा बतायी गयी योग विधि सर्वोत्तम विधि है मन की एकाग्रता द्वारा ही शिक्षण हो सकता है। स्वामी जी ने कहा चाहे विद्वान अध्यापक हो, चाहे मेधावी छात्र हो चाहे अन्य कोई भी हो, यदि वह किसी विषय को जानने की चेष्ठा कर रहा है तो उसे उपयुक्त प्रथा से ही काम लेना पड़ेगा।''[6]

स्वामी जी ने गुरु को आवश्यक ही नहीं अनिवार्य बताया है, वे गुरु–गृह प्रणाली के समर्थक थे। उनके अनुसार शिक्षकों को बाल मनोविज्ञान के साथ ही भौतिक एवं आध्यात्मिक दोनों प्रकार का ज्ञान होना चाहिए। स्वामी जी ने कहा कि जिस व्यक्ति की आत्मा से दूसरी आत्मा में शक्ति का संचार होता है वही गुरु है और जिसकी आत्मा में यह शक्ति संचारित होती है, उसे शिष्य कहते हैं। वे ऐसे गुरूओं के पक्ष में थे जिनके जीवन का सिद्धान्तदृश्आत्मनोमोक्षार्थ जगद्वितायश्च हो। इस प्रकार स्वामीजी शिक्षक के प्राचीन और अर्वाचीन दोनों स्वरूपों के समर्थक थे यदि हम वर्तमान परिप्रेक्ष्य में देखें तो स्वामीजी ने जिन गुणों की अपेक्षा शिक्षक के लिए निर्धारित किये हैं, आज हम आदर्श रूप से इन विशेषताओं से युक्त शिक्षक की कल्पना भले ही कर लें, लेकिन आज के गुरु चाहे जिस क्षेत्र के हों, सभी विशेषताएँ खोजने पर नहीं मिलेंगी। स्वामी जी ने प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के किसी भी शिक्षक की न तो योग्यता निर्धारित किये और न ही वेतन, जबकि आज हर स्तर पर योग्यताएँ एवं वेतन

निर्धारित हैं। आज का शिक्षक तो पूर्णतया अर्थोपार्जन की क्रिया पर विश्वास करता है।

स्वामी जी के अनुसार भौतिक एवं आध्यात्मिक किसी भी प्रकार के ज्ञान के लिए यह आवश्यक है कि शिक्षार्थी ब्रह्मचर्य का पालन करें और शिक्षक के सानिध्य में रहकर ज्ञानार्जन करें। वे गुरुकुल प्रथा की प्रशंसा करते हुए एक सच्चे शिक्षार्थी में सच्ची ज्ञान पिपासा गुरु के प्रति विश्वास, नम्रता, श्रद्धा और सहानुभूति की भावना, ब्रह्मचर्य, सहनशक्ति, धैर्य, मुक्त होने की तीव्र आकाँक्षा, परिश्रम, शारीरिक सुदृढ़ता एवं चरित्र की पवित्रता आदि गुण होने चाहिए। मोक्ष की कामना से सत्य को जानने की आकाँक्षा वाले शिष्य को आध्यात्मिक एवं जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु विज्ञान, तकनीकी एवं औद्योगिक शिक्षा प्राप्त करने वाले को लौकिक वर्ग का शिष्य स्वामी जी ने बताया। इस प्रकार हम देखते हैं कि स्वामीजी के शिष्य सम्बन्धी विचार उच्च कोटि के हैं। स्वामीजी ने छात्र के जिन गुणों का उल्लेख किया है अगर उसका कुछ भाग आज के छात्रों में आ जाय तो वह उच्च कोटि का प्रतिभाशाली छात्र होगा। आज का आध्यात्मिक छात्र इन विशेषताओं से युक्त होंगे, परन्तु लौकिक वर्ग का छात्र इन विशेषताओं से युक्त नहीं होंगे, क्योंकि आज के छात्र दूसरों के ज्ञान को बिना समझे रट लेते हैं और उसे परीक्षा में लिखकर, उसकी पूर्ण आहुति कर देते हैं।

स्वामी विवेकानंद ने कहा था कि 'जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सके, मनुष्य बन सके, चरित्र गठन कर सके और विचारो का सामंजस्य कर सके वही वास्तव में शिक्षा कहलाने योग्य है'। मानव निर्माण को शिक्षा का मूल उद्देश्य मानने वाले स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन परम्परागत और आधुनिक शिक्षा प्रणाली का अद्भुत समन्वय है। स्वामी विवेकानंद का शैक्षिक दर्शन आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

lUnHkZ lwph %

1. सक्सेना, एन. आर. स्वरूप, उदीयमान भारतीय समाज मे शिक्षक, आर. लाल. बुक डिपो, मेरठ–2008, पृ. स. 352–353
2. भटनागर, ए. बी., शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार, आर. लालबुक डिपो मेरठ–2014, पृ0 स0 220
3. सक्सेना, एन. आर. स्वरूप, उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक, आर. लाल बुक डिपो, मेरठ–2008 पृ. स. 351
4. पाण्डेय, रामशकल, ज्ञान एवं पाठ्यक्रम, श्री विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा–2– 2020 पृ. स.– 126
5. पाण्डेय, रामशकल, ज्ञान एवं पाठ्यक्रम, श्री विनोद पुस्तक मंदिर आगरा–2 – 2020 पृ. स.– 116
6. पाण्डेय, रामशकल, ज्ञान एवं पाठ्यक्रम, श्री विनोद पुस्त्क मंदिर, आगरा–2– 2020 पृ. स.– 118